जेम्स ऐलन की कहानियाँ

जेम्स एलन

तथा

स्वेट मार्डन की कहानियाँ

सन्तराम वत्स्य

पुस्तकायन

मूल्य : ८.००

प्रकाशक : पुस्तकायन, २/४२४०-ए, अंसारी रोड, नई दिल्ली-२ /
संस्करण : १९८९ / मुद्रक : अजय प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-३२

दो शब्द

मनीषी जेम्स एलन के जीवन-चरित के बारे में यद्यपि कुछ मालूम नहीं हो सका, पर उनके रचित 'आत्म-विकास'-सम्बन्धी साहित्य को पढ़ने से यह स्पष्ट धारणा बनती है कि उन्होंने भारतीय साधना-पद्धतियों—विशेष रूप से योग और वेदान्त का गहरा अध्ययन किया था और उनके जीवन पर उसकी पूरी छाप थी। उनकी सबसे बड़ी देन यह है कि जिस व्यावहारिक योग और वेदान्त ने उनके जीवन में शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य प्रदान किया था, जिस एक का उन्होंने अनेक में साक्षात्कार किया था, जिस दैवी सम्पद् को उन्होंने प्राप्त किया था, उसे सबको मुक्तहस्त होकर बाँटा। उनके साहित्य ने करोड़ों के जीवन को दिशा दी है।

उनकी पत्नी श्रीमती लिली एल० एलन ने लिखा है :

"...ये मेरे पति के अनुभव में आई हुई बातें हैं। उनका इन बातों पर विश्वास ही नहीं था किन्तु उनकी इनके अनुकूल पूर्ण प्रवृत्ति भी थी।"

जेम्स एलन लिखते हैं : "मैंने तीन पगों में स्वर्ग में प्रवेश किया। पहला पग सद्विचार था, दूसरा सुवचन और तीसरा सच्चरित्र।"

एक दूसरी जगह वे लिखते हैं : "अपने मन में सभ्य, प्रबल, पवित्र और निष्पक्ष विचारों को स्थान दीजिए; अपने हृदय में प्रेम, दया और अनुकम्पा के भाव उत्पन्न कीजिए; अपनी जिह्वा

[illegible] यह शान्ति और पवित्रता में प्रवेश का मार्ग है।"

ये विचार सभी के लिए प्रकाश-स्तम्भ का काम देने वाले हैं। इसी उद्देश्य से सत्साहित्य के पाठकों के लिए प्रस्तुत किये हैं।

—सन्तराम वत्स्य

कहानी-क्रम

१. अपने को सुधारो	...	७
२. सच्चा सुख	...	९
३. सफलता की पगडंडियाँ	...	१२
४. कथनी नहीं, करनी	...	१३
५. विचारों की शक्ति	...	१४
६. मन के रोगी—तन के रोगी	...	१५
७. अपने साधनों का उपयोग करो	...	१८
८. ज्ञान की गरिमा	...	१९
९. मुझसे बुरा न कोई	...	२१
१०. वैर से वैर शान्त नहीं होता	...	२३
११. मित्र हो तो ऐसा	...	२९
१२. शरणागत की रक्षा	...	३२
१३. पहली जीत	...	३४
१४. मन माने की बात	...	३९
१५. ज्ञान की भूख	...	४३
१६. भय का भूत	...	४५
१७. तुम भी अपना जाल डाल दो	...	४७

अपने को सुधारो

मैं एक शान्त-सौम्य स्वभाव की स्त्री को जानता हूँ। उसे सभी प्रकार के सुख प्राप्त हैं। अगर कहें कि आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक सुख उसे प्राप्त हैं तो यह सच ही होगा।

थोड़े दिन हुए, मेरे एक मित्र ने उससे कहा, "आप बहुत सौभाग्यशालिनी हैं। आप जिस वस्तु की भी इच्छा करती हैं, वही आपको सुलभ हो जाती है।"

निस्सन्देह, मेरे मित्र ने ठीक ही कहा था। किन्तु इस सबका कारण उसका निर्मल मन ही था। उसने अपना मानस प्रतिदिन सँवारा था। एक-एक करके उसने अपने दोषों को उखाड़ फेंका था, ठीक उसी तरह जैसे एक चतुर माली क्यारियों में से खर-पतवार को चुन-चुनकर उखाड़ फेंकता है।

एक व्यक्ति ने घर में फुलवाड़ी लगाने का निश्चय किया। वह बाज़ार से बीज मोल ले आया और क्यारियों में बो दिये। कुछ दिनों बाद अंकुर फूटे और छोटे-छोटे पौधे तैयार हो गए। पर वह आदमी

पहचानता नहीं था कि फूलों के पौधे कौन-से हैं और खर-पतवार कौन-से। उसने एक दूसरे आदमी से पूछा कि 'क्यारियों में मैंने तो एक-एक ही तरह के बीज बोए थे, पर पौधे कई तरह के उग आए हैं। उनमें फूलों के पौधे कौन-से हैं और फालतू कौन-से, इसका पता कैसे चले ? ताकि जो फालतू हैं, उन्हें उखाड़ फेंका जाए।'

उस चतुर व्यक्ति ने कहा कि 'मैं फूलों के पौधों की पहचान तो नहीं बता सकता, पर खर-पतवार की पहचान बता सकता हूँ। हाँ, पहचानने का यह तरीका थोड़ा विलक्षण ज़रूर है। आप ऐसा कीजिए कि सारे पौधों को ऊपर से काट डालिये। जो दोबारा अपने-आप बढ़ने लगें वे खर-पतवार के, और जो नष्ट हो जाएँ वे फूलों के।'

इस उदाहरण से एक महत्त्वपूर्ण परिणाम निकलता है। जो बेकार है, जो अनावश्यक है, वह बिना प्रयत्न के ही पैदा होता रहता है, बढ़ता रहता है। किन्तु जो उपयोगी है, उसे बोना पड़ता है, सींचना पड़ता है, खाद देनी पड़ती है और बाड़ भी लगानी पड़ती है। इतना ही नहीं, पक्षियों से बचाने के लिए मचान बाँध कर बैठना पड़ता है और उन्हें डराने-धमकाने के लिए तरह-तरह के उपाय करने पड़ते हैं।

सद्गुणों की प्राप्ति के लिए भी इसी तरह के

उपाय करने होते हैं। पर दुर्गुणों को सीखने के लिए किसी पाठशाला में प्रवेश नहीं लेना पड़ता। वे खर-पतवार की तरह बिना बोए अपने-आप उग आते हैं।

*

सच्चा सुख

एक कवि ने सच्चे सुख के रहस्य को अपनी कविता में इस तरह चित्रित किया है :

"मैं सच्चे सुख की खोज में बलूत के ऊँचे-ऊँचे पेड़ों और लहलहाती हुई 'इश्क-पेचाँ' के पास से निकलता हुआ उसके पीछे दौड़ा, परन्तु मैं उसे पकड़ नहीं सका। वह तेज़ी से निकल गया।

"मैंने पहाड़ों और घाटियों पर होकर, खेतों और बगीचों में से निकलकर, हरे-भरे मैदानों में उसका पीछा किया। ज़ोरों से बहती हुई नदी को शीघ्रता से पार कर, मैं पहाड़ों की ऊँची-ऊँची चोटियों पर चढ़ गया। क्या जल और क्या थल, मैं सब जगह घूमा, परन्तु सुख मेरे हाथ नहीं आया। वह सदा मुझसे दूर ही रहा। जब मैं चलते-चलते थक गया और बेसुध होने लगा तो मैंने विवश होकर उसका पीछा करना छोड़ दिया। मैं

नदी-तट की ठंडी-ठंडी रेत पर थोड़ी देर विश्राम करने के लिए लेट गया।

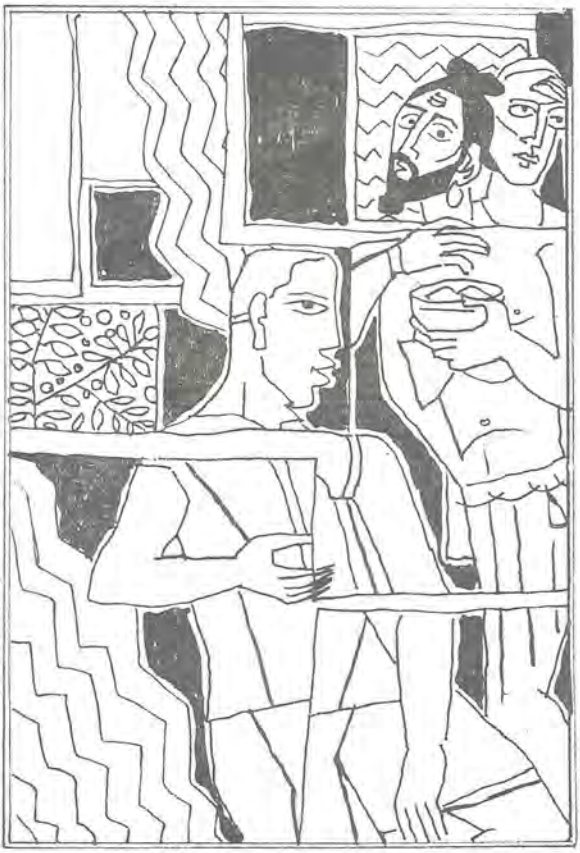

"इतने में एक दीन-हीन-सा व्यक्ति मेरे पास आया और उसने कुछ खाने को माँगा।

"उसे आए हुए अभी देर नहीं हुई थी कि एक दूसरा व्यक्ति आ पहुँचा और उसने अपना भिक्षा-पात्र मेरी ओर बढ़ा दिया।

"मैंने भूखे को रोटी और भिखमंगे को कुछ पैसे दिये। इन दोनों के जाते ही दो लोग और आ पहुँचे। उनमें से एक प्रेम और सहानुभूति का इच्छुक था और दूसरा आराम का।

"मैंने दोनों का हृदय से स्वागत किया और दोनों की आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयत्न किया।

"इतने में क्या देखता हूँ कि जिस सुख की खोज में भटक-भटककर मैंने अपने-आपको थका डाला था, वही सच्चा सुख मेरे सामने आ खड़ा हुआ और कहने लगा, "मैं तुम्हारा दास हूँ।"

× × ×

क्या आप भी अब तक सुख को ग़लत जगह तो नहीं ढूँढ रहे थे?

स्वर्गीय पं० रामनरेश त्रिपाठी ने इस भाव को अपनी कविता में बड़ी सुन्दरता से व्यक्त किया है:

"मैं ढूँढता तुझे था
जब कुंज और वन में,
तू खोजता मुझे था
तब दीन के वतन में॥ *

सफलता की पगडंडियाँ

एक नवयुवक पढ़-लिखकर जब कर्म-क्षेत्र में आया तो एक के बाद एक विपत्ति उस पर टूटती रही। कभी प्रकृति उसका साथ न देती और कभी परिस्थिति। कभी उसके सहयोगी साथ छोड़ जाते और कभी बाज़ार का रुख बदल जाता। कभी पूँजी उधार में फँस जाती तो कभी कुछ और। मुसीबतें थीं कि पीछा नहीं छोड़ रही थीं।

उसके मित्र उसे हतोत्साहित करते थे। वे कहते थे कि "तुम अपने लिए कोई नौकरी खोज लो। व्यापार करना तुम्हारे बल-बूते का काम नहीं है।"

कोई कच्चे दिल वाला होता तो हिम्मत हार बैठता और लगी हुई पूँजी खोकर शांत हो जाता। पर उसने ऐसा नहीं किया।

वह नवयुवक पूरे आत्म-विश्वास से, दृढ़ निश्चय से कहता, "मैं इस काम में बहुत जल्दी सफल होऊँगा। तुम्हें दिखा दूँगा कि मैं सफल होने के लिए बना हूँ। आज जो तुम्हें दिखता है कि मुझे सफलता नहीं मिल रही है, वह मेरे मन का भाव नहीं है, तुम्हारे मन का भाव है।

"मैं न तो उन लोगों में से हूँ जो रुकावटों के डर

से काम को शुरू ही नहीं करते, और न उन लोगों में से हूँ जो शुरू किये हुए काम को विघ्नों के डर से छोड़ देते हैं। मैं उस धातु का बना हुआ हूँ जो न तो गर्मी पाकर पिघलती है और न बोझ से दबती है, न खिंचाव से टूटती है और न घर्षण से घिसती है।"

उसके मित्र साक्षी हैं और दाँतों-तले उँगली दबाते हैं कि ऐसे जीवट का आदमी हमने दूसरा नहीं देखा।

आज उसका उद्योग, जो अपने प्रारंभिक काल में छोटा था, आज वट वृक्ष की तरह फैला हुआ है और कितने सारे लोगों को उसमें आश्रय मिला हुआ है।

*

कथनी नहीं, करनी

बेंजामिन डिज़राइली जब पहली पार्लियामेंट में भाषण देने खड़े हुए तो बोल नहीं सके।

पार्लियामेंट के सदस्यों ने उनका मज़ाक उड़ाया।

उस समय उन्होंने मज़ाक उड़ाने वाले सदस्यों से कहा था कि "एक दिन ऐसा आएगा जब आप लोग मेरे व्याख्यान को ध्यान से सुनेंगे। इतना ही नहीं, आप इसे अपना अहोभाग्य समझेंगे कि आपने मेरा व्याख्यान

सुना।"

यह कोई गर्वोक्ति नहीं थी। यह बात झेंप मिटाने के उद्देश्य से भी नहीं कही गई थी। यह बात उनके अन्तरात्मा से निकली थी। यह आत्मा की आवाज़ थी, जिसे एक दिन सत्य का बाना पहनना था।

स्वप्न देखना बहुत अच्छी बात है, बशर्ते कि उन स्वप्नों को साकार करने वाली संकल्प-शक्ति के हम स्वामी हों।

अन्यथा, वे क्षुद्र लोग होते हैं जो अपनी इच्छाओं को स्वप्नों में साकार करते हैं। संकल्प के धनी लोग तो स्वप्नों को अपने कार्यों में साकार कर दिखाते हैं।

*

विचारों की शक्ति

मार्टिन लूथर पूर्व-निश्चित कार्यक्रम के अनुसार वर्म्स नामक स्थान को जाने वाले थे। उनके मित्रों ने सलाह दी कि वहाँ नहीं जाना चाहिए।

मार्टिन लूथर ने कारण पूछा तो बोले कि "वहाँ आपका विरोध करने वाले बहुत लोग हैं। हो सकता है कि वे आपके लिए प्राणों का संकट पैदा कर दें।"

इस पर मार्टिन लूथर ने उन्हें जवाब दिया कि "मैं वहाँ अवश्य जाऊँगा। वहाँ मुझसे शत्रुता करने वाले चाहे कितने ही लोग क्यों न हों, प्राण जाने के डर से मैं अपने मार्ग से विचलित नहीं होऊँगा। मैंने जिस सत्य मार्ग को स्वीकार किया है, उस पर पूरी दृढ़ता के साथ चलूँगा।"

यह है सच्ची आत्मिक शक्ति, जो न भय मानती है और न विराम।

*

मन के रोगी—तन के रोगी

एक मनुष्य बीमार पड़ा। पहले तो उसने पड़ोस के डाक्टर से इलाज करवाया, किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। बाद में बड़े डाक्टरों और उसके बाद उस रोग के विशेषज्ञ डाक्टरों से इलाज कराया। रोग फिर भी ठीक नहीं हुआ। तब होम्योपैथी के डाक्टरों से इलाज करवाया। फिर भी कोई लाभ नहीं हुआ। फिर यूनानी पद्धति से इलाज कराया; तब टोने-टोटके करके देखे। लाभ नहीं हुआ।

मित्रों ने सलाह दी कि जलवायु बदलकर देखना

चाहिए। शायद उसीसे लाभ हो जाए।

वह रोगी, जिसके शरीर की हालत और पैसे की हालत दिनोंदिन पतली होती जा रही थी, फिर भी उसने स्वास्थ्यवर्द्धक स्थान में जाने का निश्चय किया।

वह पूरा एक महीना वहाँ रहा, पर रोग ठीक नहीं हुआ।

एक रात उस रोगी ने स्वप्न देखा कि एक देवता ने उसे दर्शन दिये और पूछा, "क्या तुमने सब प्रकार के इलाज करवा लिये ?"

रोगी बोला, "हाँ, मैंने सब प्रकार के इलाज करवा लिये। जिस किसी अच्छे डाक्टर के पास जाने के लिए मुझे किसी ने कहा, तुरन्त गया। जलवायु-परिवर्तन करके भी देखा, पर लाभ नहीं हुआ।"

इस पर देवता ने कहा, "मेरे साथ आओ। मैं तुम्हें एक झरने पर ले चलता हूँ। वह झरना निश्चय ही तुमने नहीं देखा होगा। उसके पानी में स्नान करोगे तो तुम्हारा रोग जाता रहेगा।"

रोगी उस देवता के पीछे-पीछे चलता झरने के पास जा पहुँचा। अब देवता ने कहा कि "इस पानी में स्नान करो। देखो तुम्हारा यह असाध्य रोग कैसे भागता है।"

यह कहकर देवता अन्तर्ध्यान हो गया। रोगी ने उस झरने के निर्मल और शीतल जल में स्नान किया।

स्नान करके जैसे ही वह बाहर निकला, उसने अनुभव किया कि वह पूरी तरह स्वस्थ हो गया है। साथ ही उसने देखा कि झरने के पास एक शिला पर मोटे अक्षरों में 'त्याग' शब्द लिखा हुआ है।

बस, इतना स्वप्न देखने के बाद उसकी आँख खुल गई।

अब वह अभी-अभी देखे स्वप्न के बारे में विचार करने लगा। उसकी अन्तरात्मा ने उसे समझा दिया कि यह जो स्वप्न में शिला पर मैंने 'त्याग' शब्द लिखा देखा था, इसका क्या अभिप्राय था। उसने अपना आत्म-निरीक्षण किया तो पता चला कि किसी एक मामले में उसने पाप कमाया था। अपने उस पाप को वह कभी स्पष्ट रूप से किसी के सामने स्वीकार नहीं करता था। किन्तु मन में, कहीं बहुत गहरे में अपने पापी होने का भाव बैठा हुआ था। वही मानसिक गाँठ बन गई थी। उसी ने रोग का रूप ले लिया था। क्योंकि रोग की जड़ मन में थी, इसलिए दवाई से कोई लाभ होने वाला नहीं था।

उसने ज्योंही अपनी भूल को सुधारने का निश्चय किया, उसका रोग ठीक होना शुरू हो गया। थोड़े दिनों बाद वह बिना दवाई के ही ठीक हो गया। यह

कहना अनावश्यक होगा कि इस बीच उसने अपनी भूल सुधार ली थी।

*

अपने साधनों का उपयोग करो

एक मालिक के पास तीन आदमी काम करते थे। मालिक ने एक बार किसी प्रसन्नता के अवसर पर तीनों नौकरों को पुरस्कार दिया।

उनमें से दो नौकरों ने तो पुरस्कार में मिले रुपयों को काम-धंधे में लगाया और धीरे-धीरे उनकी पूँजी में बढ़ोतरी होती गई। देर-सवेर वे धनवान बन गए। पर तीसरे व्यक्ति ने उन रुपयों को धरती में गाड़कर रख दिया। उसे भय था कि कोई रुपयों को चुरा लेगा। उसके एक मित्र ने उसे सलाह दी कि इन रुपयों से कोई छोटा-मोटा काम कर लो। पर उसे हिम्मत नहीं पड़ी। उसने कहा, "आजकल समय अच्छा नहीं है। अगर काम ठीक से न चला तो ये रुपए भी डूब जाएँगे।"

किसी दूसरे ने कहा कि इन्हें बैंक में रख दो। तब वह बोला कि बैंक फेल हो जाए तो मेरे रुपए डूब जाएँगे।

× × ×

हमारे पास जो कुछ है, समय और परिस्थिति के अनुसार हमें उसका अच्छे-से-अच्छा उपयोग करना चाहिए। यह कभी नहीं सोचना चाहिए कि जब तक हमारे पास पर्याप्त साधन नहीं होंगे, तब तक हम काम शुरू नहीं करेंगे।

*

ज्ञान की गरिमा

एक ज्ञानी महात्मा थे। उनका एक शिष्य सरल और शान्त स्वभाव का था। वह मन लगाकर पढ़ता, पढ़े हुए पर सोच-विचार करता। जो समझ नहीं आता, उसे फिर पूछता और आलस्य छोड़कर परिश्रम करता। उसके सारे कामों में व्यवस्था होती। वह उचित-अनुचित का सदा ध्यान रखता—उचित भोजन, उचित निद्रा, उचित विश्राम और उचित बोलना।

शास्त्र की एक गंभीर बात पर वह विचार कर रहा था। उसे जो उत्तर सूझा, वह ठीक है या ग़लत, इसका वह निश्चय नहीं कर पा रहा था। उसने वह प्रश्न अपने गुरुजी के सामने रखा।

प्रश्न गंभीर था। गुरुजी भी तुरन्त उसका उत्तर

नहीं दे सके। बोले, "तुम्हारा प्रश्न बहुत पेचीदा है। मैं सोचकर इसका उत्तर देने का प्रयत्न करूँगा।"

गुरुजी सोचते रहे, पर उत्तर नहीं सूझा। उन्होंने कई पोथियों के पन्ने पलटे कि कोई उत्तर मिल जाए, पर नहीं मिला।

तब एक दिन उन्होंने शिष्य को बुलाकर कहा कि "तुम्हारे प्रश्न का समाधान मैं नहीं कर सका। क्या तुमने इसका कोई उत्तर सोचा है ? यदि सोचा हो तो बताओ।"

शिष्य ने कहा, "गुरुजी, मैंने सोचा तो है, पर वह ठीक है कि नहीं, कुछ कह नहीं सकता।"

उसने अपने मन में सोचा उत्तर गुरुजी को बताया।

गुरुजी ने कहा, "तुम्हारा उत्तर ठीक है। तुमने ऐसे प्रश्न का उत्तर ढूँढ लिया है, जिसका उत्तर मैं भी नहीं दे सकता था। तुम्हारे भीतर के नेत्र खुल गए हैं। अब मैं तुम्हें शिक्षा देने में असमर्थ हूँ। अब तुम्हें और किसी से शिक्षा लेने की आवश्यकता भी नहीं रही। सच्ची शिक्षा वही है जिससे भीतर के नेत्र खुल जाएँ। सत्य तुम्हारे ज्ञान-नेत्रों के सामने प्रकट हो गया है। अब तुममें गुरुत्व का प्रादुर्भाव हो गया है। अब तुम शिष्य नहीं रहे। अब तुम मेरी तरह ही दूसरों को

उपदेश दे सकते हो। तुम्हारे भीतर मुझसे भी ऊँची प्रतिभा का प्रादुर्भाव हुआ है।"

*

मुझसे बुरा न कोई

एक युवती स्त्री थी। उसका स्वभाव स्वच्छन्द था। वह नियम-संयम को महत्त्व नहीं देती थी। यौवन के उन्माद में वह मनमानी करने लगी।

समाज उसे अच्छी नज़र से नहीं देखता था। उसके आचरण पर पास-पड़ोस के लोग उँगलियाँ उठाते रहते। उँगलियाँ उठाने वाले भी दूध के धुले तो नहीं थे, पर समाज की रीति कुछ ऐसी है कि चोर वह जो चोरी करते पकड़ा जाए।

उस युवती का दुराचरण जब प्रमाणित हो गया तो लोगों ने उसे पत्थर मार-मारकर, मार डालने का निश्चय किया। पुराने ज़माने में सज़ा देने के इस तरह के कितने ही क्रूर उपाय काम में लाए जाते थे।

जिन दिनों की यह घटना है, उन दिनों महात्मा ईसा वहीं घूम रहे थे। उन्हें सारी बात बताई गई।

सन्त महात्माओं का लोगों को शिक्षा देने का

अपना निराला ही ढंग होता है। महात्मा ईसा ने वही ढंग अपनाया।

उन्होंने कहा, "ठीक है। आप लोग उसे सज़ा देना ही चाहते हैं तो ज़रूर दीजिए। पर एक बात का ध्यान ज़रूर रखें। उस युवती को पहला पत्थर वही मारे, जिसने कभी कोई पाप न किया हो।"

अब तो सारी भीड़ स्तब्ध रह गई। किसी में भी यह हिम्मत नहीं थी कि सबके सामने अपने को पवित्र घोषित कर सके। कभी न कभी सभी से भूलें होती हैं। पर जो अपनी भूल को सुधार ले और फिर भूल न करे, वही भला आदमी है।

जब पहला पत्थर मारने वाला ही कोई आगे नहीं आया तो बेचारी की जान बच गई।

दयालु महात्मा ईसा आगे बढ़े। उन्होंने उसे कहा, "जाओ, भगवान् तुम्हारे रक्षक हैं। भूल को दोहराना नहीं।"

वह युवती महात्मा ईसा के चरणों पर गिर पड़ी और अपने आँसुओं से उन्हें धो डाला।

*

वैर से वैर शान्त नहीं होता

काशी में शक्तिशाली राजा ब्रह्मदत्त का राज्य था। काशी के पड़ोसी राज्य कौशल में दीर्घिति का राज्य था। काशी का राज्य बड़ा था और कौशल का छोटा। काशी का राजा कौशल के राज्य को हड़पना चाहता था। उसने कौशल पर हमला कर दिया।

कौशल के राजा ने सोचा कि वह काशीराज का सामना नहीं कर सकता। यदि वह युद्ध करता तो उसके सैनिक मारे जाते और प्रजा को भी तरह-तरह के कष्ट झेलने पड़ते। इसलिए कौशलराज अपनी रानी को लेकर राज्य से भाग गया।

कुछ दिनों तक राजा-रानी वेश बदलकर इधर-उधर घूमते रहे। अन्त में एक बढ़ई के घर में ठहर गए।

यहाँ रानी ने एक पुत्र को जन्म दिया। उन्होंने पुत्र का नाम दीर्घायु रखा।

काशीराज ने कौशल राज्य पर अधिकार जमा लिया। वह सोचने लगा कि कौशलराज उससे बदला लेने का प्रयत्न कर सकता है। इसलिए उसे खोजकर मरवा देना चाहिए।

कौशलराज अपने पुत्र दीर्घायु को पूरी तरह

शिक्षित करने में लगा हुआ था। वह उसे शस्त्र और शास्त्र दोनों की शिक्षा दे रहा था।

काशीराज द्वारा बहुत खोजने पर भी कौशलराज और उसकी रानी का कुछ पता नहीं चला।

इस बीच कौशलराज का पुत्र राजनीति का कुशल जानकार बन गया। पुत्र को सब तरह से योग्य बनाकर कौशलराज निश्चिन्त हो गया।

काशीराज के जासूसों को वर्षों बाद कौशलराज के जीवित होने और अज्ञातवास में रहने का ठिकाना मालूम हो गया।

कौशलराज को भी पता लग गया कि काशीराज के जासूसों को उसका पता-ठिकाना मालूम हो गया है।

कौशलराज ने सोचा कि काशीराज हम तीनों को मौत के घाट उतारे, इससे तो यही ठीक होगा कि अपने पुत्र दीर्घायु को कहीं दूसरी जगह भेज दें।

उसने वैसा ही किया।

कुछ दिनों बाद काशीराज के सैनिकों ने कौशल-राज और रानी को पकड़ लिया और राजा के पास ले गए। राजा ने उन दोनों को मृत्युदण्ड दे दिया। किन्तु काशीराज को जासूसों से मालूम हो गया था कि कौशलराज का एक पुत्र भी है और वह जवान हो गया

है। उसने सोचा, अपने माता-पिता की मृत्यु का समाचार सुनकर, वह अवश्य बदला लेने की बात सोचेगा। उसके पिता का राज्य भी मैंने छीना है, उसे वापस लेने का प्रयत्न भी वह करेगा। यह सोचकर काशीराज को दिन-रात चिन्ता सताने लगी—क्या मालूम कौशलराज का पुत्र छलकपट का सहारा लेकर मुझे मारने या मरवाने के लिए प्रयत्नशील हो! बस, यह सोच-सोचकर उसकी भूख और नींद जाती रही।

उधर कौशलराज-पुत्र दीर्घायु ने अपना नाम-धाम बदल लिया और काशीराज के यहाँ, उनके हाथीखाने में नौकर हो गया। उसे हाथियों की देख-रेख के काम पर लगा दिया गया।

दीर्घायु अपना काम बड़ी मेहनत और तन्मयता से करता था। उसके सभी साथी उसे चाहने लगे।

धीरे-धीरे दीर्घायु की योग्यता की चर्चा राजा तक पहुँची। राजा ने इस होनहार युवक को अपने पास बुलाया। राजा इस नवयुवक की बातचीत से बहुत प्रभावित हुआ।

फिर क्या था! राजा ने उसे हाथीखाने से हटाकर राजमहल में नियुक्त कर दिया।

वहाँ भी उसने सभी को अपने काम से प्रसन्न और प्रभावित किया। उसकी कार्यकुशलता का सिक्का

जम गया। राजा ने शीघ्र ही उसे अपने विश्वस्त सेवकों में सम्मिलित कर लिया।

एक दिन की बात है। काशीराज ब्रह्मदत्त शिकार खेलते-खेलते जंगल में दूर निकल गया। सारे साथी पीछे छूट गए। इस समय केवल दीर्घायु ही एक था, जो छाया की तरह राजा के साथ था।

राजा बहुत थक गया था और विश्राम करना चाहता था। वह दीर्घायु की गोद में सिर रखकर निश्चिन्त सो गया। थोड़ी ही देर में राजा को गहरी नींद आ गई।

दीर्घायु ने मन में सोचा, 'इस राजा ने मेरे पिता का राज्य छीना। इतने पर भी इसे सन्तोष नहीं हुआ तो वर्षों बाद मेरे माता-पिता को खोजकर मार डाला। अब इसकी जान मेरे हाथ में है। सारे वैर का बदला अभी चुकाता हूँ।' यह सोचकर उसने अपनी तलवार निकाल ली। किन्तु इसी समय उसे अपने स्वर्गीय पिता की अन्तिम सीख याद आ गई।

उसके पिता ने उसे दूसरी जगह भेजते समय कहा था कि 'बेटा, बदले की भावना मन में न रखना। जहाँ तक हो सके, वैरी को भी क्षमा कर देना।' फिर क्या था! यह बात याद आते ही उसने तलवार म्यान में वापस रख दी।

इसी समय राजा की नींद टूट गई और वह हड़बड़ाकर उठ बैठा।

युवक दीर्घायु ने राजा से पूछा कि वे हड़बड़ाकर

क्यों उठे ? क्या उन्होंने कोई स्वप्न देखा है ?

राजा ने कहा, "मुझे कभी भी चैन की नींद नहीं आती । मुझे हर रात ऐसे सपने आते हैं कि कौशलराज का पुत्र दीर्घायु मुझे मारे डालता है, और मैं घबराकर उठ बैठता हूँ । अभी भी मुझे ऐसा ही बुरा सपना दिखाई दिया था । आज का सपना इतना साफ और लम्बा था कि अब मुझे डर लग रहा है और मेरा दिल मारे डर के ज़ोर से धड़क रहा है ।"

यह सुनते ही दीर्घायु ने फिर तलवार खींच ली और बोला, "मैं ही दीर्घायु हूँ । अब आपकी ज़िन्दगी मेरे हाथ में है । अपने माता-पिता के हत्यारे से बदला लेने का मौका आ गया है ।"

काशीराज ब्रह्मदत्त अब तो कुमार दीर्घायु के पैरों पर गिर पड़ा और प्राणों की भीख माँगने लगा ।

दीर्घायु ने कहा, "मेरे स्वर्गीय पिता ने मुझे बदला लेने की मनाही की है । मैं आपके प्राण नहीं लूँगा । पर आप अब भी अपने मन में वैर की गाँठ बाँधे हुए हैं और मेरे प्राणों के ग्राहक बने हुए हैं । जैसे आपको अपने प्राण प्यारे हैं, वैसे ही दूसरों को भी हैं । आप भी मुझे अभयदान दें ।"

राजा ने दीर्घायु को अभयदान दिया । दीर्घायु ने भी अपनी तलवार म्यान में वापस रख दी ।

दोनों ने एक-दूसरे के हाथों में हाथ डालकर प्रतिज्ञा की कि वे एक-दूसरे को कोई हानि नहीं पहुँचाएँगे।

राजा ब्रह्मदत्त ने सोचा कि वैर का मूल कारण है—कौशलराज का राज्य छीनना। आज मैं यह राज्य दीर्घायु को लौटा देता हूँ। वह बोला, "मैं तुम्हारे माता-पिता का जीवन तो नहीं लौटा सकता, पर राज्य तो लौटा ही सकता हूँ। इतना ही नहीं, आपस के इस प्रेम-सम्बन्ध को पक्का करने के लिए अपनी पुत्री का विवाह तुम्हारे साथ करूँगा।"

*

मित्र हो तो ऐसा

यूरोप में 'सिसली' नामक एक द्वीप है। जब उस छोटे द्वीप का राजा डायोनीसियस था, यह घटना तब की है। राजा बड़ा क्रोधी था और छोटी-छोटी बातों के लिए प्राणदण्ड दे देता था। उसने पीथियस को प्राणदण्ड की आज्ञा दी।

पीथियस ने राजा से प्रार्थना की कि उसे अपनी जन्मभूमि ग्रीस में जाकर, अपने सम्बन्धियों से मिलने और अपने कुछ कामों को निपटाने की आज्ञा दी जाए।

उसने कहा कि वह मृत्युदण्ड के लिए निश्चित दिन तक अवश्य वापस आ जाएगा ।

राजा ने कहा, "तुम सिसली से बाहर चले गए तो फिर मरने के लिए यहाँ क्यों लौटोगे ? तुम लौट आओगे, हमें इसका कतई भरोसा नहीं है । और तुम्हारे न लौटने पर हम किसको प्राणदण्ड देंगे ?"

राजा की बात सुनकर दण्ड पाए व्यक्ति का एक मित्र डेमन भीड़ में से आगे आकर बोला, "मैं इसकी ज़िम्मेदारी लेने को तैयार हूँ । अगर पीथियस समय पर लौटकर नहीं आया तो फिर मुझे प्राणदण्ड दे दिया जाए ।"

राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ कि यह कैसा आदमी है जो दूसरे के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा रहा है ? खैर, राजा ने उसकी ज़मानत मान ली । पीथियस अपने ज़मानती मित्र के साथ समय पर आने का वायदा करके ग्रीस चला गया ।

एक-एक करके दिन बीतते गए । आखिर फाँसी के लिए निश्चित दिन आ पहुँचा, पर पीथियस वापस नहीं पहुँचा । फिर भी डेमन को अपने मित्र पीथियस पर पूरा विश्वास था कि वह विश्वासघाती नहीं है । कोई ऐसा कारण हो गया होगा कि वह नहीं पहुँच पाया । जहाज़ कहीं फँस गया होगा या कुछ और बात होगी ।

उसने मन में सोचा कि अगर मेरा मित्र किसी भी वजह से नहीं पहुँच सका और उसके बदले मुझे फाँसी पर चढ़ना पड़ा, तो भी मुझे दुःख नहीं होगा।

राजा तो स्वभाव का कठोर था ही। उसने आज्ञा दी कि अगर अभी तक पीथियस नहीं पहुँचा है तो डेमन को उसके बदले फाँसी पर लटका दिया जाए।

डेमन को फाँसी के तख्ते की ओर ले जाया गया और उसे फाँसी पर लटकाने की पूरी तैयारी हो गई। इतने में दौड़-दौड़कर हाँफता हुई पीथियस वहाँ आ पहुँचा। उसने दूर से ही चिल्ला-चिल्लाकर 'रुको-रुको' कहना शुरू कर दिया। दोनों हाथ ऊपर उठाकर वह चिल्लाता शोर मचाता वध-स्थल पर आ पहुँचा।

राजा डायोनीसियस इस सारे घटनाचक्र को ध्यान से देख रहा था। दोनों मित्रों की सच्ची मित्रता देखकर उसका पत्थर-जैसा दिल भी पिघल गया। उसने आज्ञा दी कि किसी को फाँसी नहीं दी जाएगी। ऐसे मित्रों की जोड़ी बिछोड़ना उसे अनुचित लगा। फिर उसने उन दोनों से प्रार्थना की कि मुझे भी अपना मित्र बना लें तो यह मेरा अहोभाग्य होगा।

वे तीनों मित्र बन गए और निर्दयी राजा का स्वभाव भी बदलने लगा।

*

शरणागत की रक्षा

एक हब्शी अपने बगीचे में टहल रहा था। इतने में स्पेनवासी एक योद्धा आके उसके पाँवों पर गिर पड़ा और प्रार्थना करने लगा कि उसे छिपने को जगह चाहिए। उस स्पेनवासी ने बताया कि "मैंने एक हब्शी की हत्या कर दी है और लोग मेरा पीछा कर रहे हैं। अगर मैं पकड़ा गया तो वे मुझे तुरन्त मार डालेंगे।"

उस हब्शी ने उसे छिपाने का वचन दिया। उसे एक कोठरी में बन्द कर दिया ताकि किसी को पता न चले। फिर तय किया कि इसे रात के अन्धेरे में छोड़ा जाएगा, ताकि पीछा करने वालों की नज़र से बचकर यह भाग निकले।

थोड़ी देर बाद गाँव के लोग उस हब्शी के इकलौते जवान बेटे की लाश उठाकर लाए और आँगन में रख दी। लोगों ने बताया कि "एक स्पेनवासी ने इसकी हत्या कर दी है और यहीं कहीं छिप गया है। हमने उसे बहुत खोजा, पर कहीं मिला नहीं।"

उस हब्शी को यह स्पष्ट पता चल गया कि मैंने जिस स्पेनवासी को कोठरी में छिपा रखा है, वही मेरे इस इकलौते बेटे का हत्यारा है। फिर भी उसने लोगों को कुछ नहीं बताया।

उधर वह स्पेनवासी कोठरी में बन्द, बाहर की

सारी हलचल से समझ गया था कि 'जिसने मुझे छिपाकर शरण दी है, मैं उसी के बेटे का हत्यारा हूँ।' उसे लग रहा था कि 'अब तो मेरी जान किसी तरह भी नहीं बच सकती। मैं तो स्वयं ही शत्रु की कैद में आ फँसा हूँ। मेरे पाप का दण्ड अब मिलने ही वाला है।' वह कोठरी में बन्द मौत की घड़ियाँ गिन रहा था। उसे भगवान् की लीला देखकर आश्चर्य हो रहा था कि कैसे मुझे इस काल-कोठरी में बन्द किया है! कितना विचित्र संयोग था कि जिसके बेटे की हत्या की थी, उसी से शरण माँगने चला आया!

सबने मिलकर मृतक का संस्कार किया और अपने-अपने घर गए।

हत्यारे स्पेनवासी को आश्चर्य हो रहा था कि मैं अब तक कैसे बचा हुआ हूँ?

आधी रात को उस हब्शी ने कोठरी का दरवाज़ा खोला और हत्यारे से कहा, "तुमने जिस युवक की हत्या की है, वह मेरा ही इकलौता बेटा था। तुम्हारा अपराध क्षमा करने के योग्य नहीं है। पर मैं तुमसे वायदा कर चुका हूँ। अपने वायदे को मैं अवश्य निभाऊँगा। बाहर मैंने एक घोड़ा तैयार रखा है। तुम उस पर चढ़कर यहाँ से तुरन्त भाग जाओ। रात का अँधेरा इस काम में तुम्हारी मदद करेगा। तुम्हारे

हाथ निर्दोष के खून से अपवित्र हैं। ईश्वर न्यायकारी है। मैं ईश्वर के प्रति कृतज्ञ हूँ कि उसने मुझे अपने वचन पर अडिग रहने की सामर्थ्य दी। मैं उसका न्याय उसी पर छोड़ता हूँ। अब तुम यहाँ से जा सकते हो।"

*

पहली जीत

बाफन नामक एक विद्वान ने अपनी सफलता की कहानी यों लिखी है :

"जवानी के दिनों में मुझे देर तक सोने की आदत थी। मैं काफी दिन चढ़े तक सोता रहता। इससे मेरा सवेरे का बहुमूल्य समय नष्ट होता। मैं पछताता और निश्चय करता कि कल जल्दी उठूँगा, पर पुरानी आदत और सवेरे की नींद की खुमारी के सामने पिछले दिन किये हुए निश्चय को छोड़ देता।

इस तरह मैं रोज़ सवेरे आलस से हार जाता। मेरा प्रत्येक दिन हार के पश्चात्ताप से शुरू होता और अपनी दुर्बलता पर मैं दिन-भर ग्लानि अनुभव करता।

मैंने सोचा कि इसका कुछ उपाय करना चाहिए। मैंने अलार्म वाली घड़ी का सहारा लिया। मैं घड़ी में

अलार्म लगाकर सोता। किन्तु सुबह-सुबह जब अलार्म बजता तो मैं उसे बटन दबाकर बन्द कर देता और पहले की ही तरह अलसाया-सा देर तक सोता रहता। कभी ऐसा भी होता कि नींद के कारण मुझे अलार्म

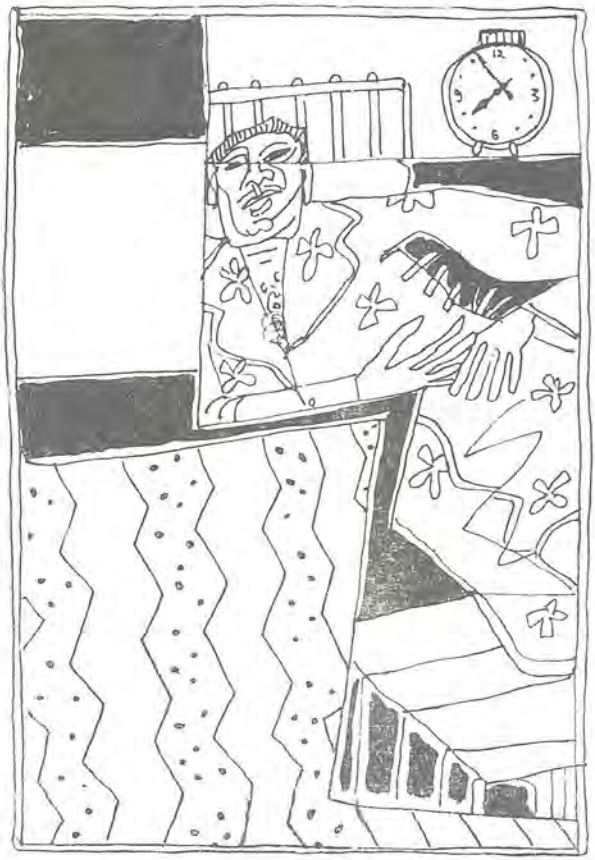

सुनाई ही न देता, और कभी-कभी अलार्म सुनकर भी मैं सोया पड़ा रहता। अलार्म बजकर बन्द हो जाता और मैं बिस्तर न छोड़ता।

देर से दिन चढ़े उठने पर पछताता और विचार करता कि मैं अपने कीमती समय को सोकर नष्ट कर रहा हूँ। शाम को फिर से दिन निकलने से पहले उठने का निश्चय करके सोता और सवेरे फिर देर तक बिस्तर में पड़ा रहता।

आखिर तंग आकर मैंने अपने नौकर से कहा कि वह मुझे सवेरे जल्दी जगा देगा तो मैं उसे रोज़ एक रुपया दिया करूँगा।

दूसरे दिन जब उस नौकर ने मुझे जगाया तो मैं फिर नहीं उठा। उसने बार-बार मुझे जगाने का प्रयत्न किया तो मैंने उसे फटकार दिया और देर तक बिस्तर में पड़ा रहा।

दूसरे दिन फिर उसने मुझे जगाने की बहुत कोशिश की, पर सफल नहीं हुआ। वह मेरा नौकर था और मेरे जगाने के लिए कहने के बावजूद उसकी एक सीमा थी।

दोपहर को मुझे अपने पर बड़ी झुँझलाहट हुई। मैं प्रतिदिन अपनी ही नज़रों में गिरता जा रहा था। ज़रा आप सोचिये कि जो आदमी चाहकर भी, ज़ोर

लगाकर भी सवेरे उठने जैसे आसान काम को नहीं कर सकता, वह जीवन में कोई बड़ा काम कैसे कर सकता है ? कोई बड़ी सफलता कैसे पा सकता है ?

मैंने नौकर को बुलाया और कहा, 'मैंने तुम्हें एक छोटा-सा काम बताया था कि मुझे सवेरे उठा दिया करो, पर तुमसे वह भी नहीं हो सका। तुम्हें अपना काम ठीक से करना नहीं आता।'

नौकर ने नम्रतापूर्वक किन्तु दृढ़ता के साथ कहा, 'आपने मुझे जगाने के लिए कहा। जब मैंने जगाया तो आपने उठने से इनकार कर दिया। अब मैं आपकी कौन-सी आज्ञा मानूँ ? पहले वाली या बाद वाली ?'

मैंने कहा, 'तुम्हें मेरी पहले वाली आज्ञा ही माननी चाहिये थी, यद्यपि नियम तो बाद वाली आज्ञा मानने का है। पर तुम सोचो कि जो आदमी किसी शत्रु के चंगुल में फँसा हो और शत्रु उसकी इच्छा के विरुद्ध, उससे कोई काम करवाना चाहता हो तो उस हालत में, दबाव में आकर दी हुई आज्ञा पालने की आवश्यकता नहीं। मैं भी सवेरे आलस्य नामक शत्रु के चंगुल में होता हूँ। इसलिए उस समय दी हुई मेरी आज्ञा मानने की आवश्यकता नहीं।'

नौकर, 'किन्तु आपने तो मुझे जगाने पर ज़बर्दस्त डाँट पिलाई थी और गालियाँ देने लगे थे। ऐसी हालत

में मैं क्या करता !'

मैंने कहा, 'तुम्हें चाहिये था कि मेरी डाँट-फटकार की परवाह न करते और मुझे ज़बर्दस्ती जगा देते। कल से ऐसा ही करना। समझे ? तुमने दो दिनों में अपना दो रुपए का नुकसान किया और मेरे समय की हानि हुई।'

तीसरे दिन नौकर ने उठाने की कोशिश की तो मैं फिर वही टालमटोल करने लगा—अभी उठता हूँ; बस, दस मिनट और सो लेने दो। बड़ी बढ़िया नींद आ रही है। रात मुझे सोने में देर हो गई थी, इसलिए अभी मेरी नींद पूरी नहीं हुई है।'

नौकर ने आँखों पर हल्के-से पानी के छींटे दिये तो मैं बिगड़ पड़ा, 'तुम्हें तमीज़ नहीं है ?' परन्तु नौकर ने ज़बर्दस्ती उठाकर बिठा दिया।

मुझे गुस्सा तो बहुत आया, मैंने बकझक भी खूब की, पर इस हंगामे में नींद भाग ही गई। मैंने नौकर का आभार मान उसे वायदे के अनुसार एक रुपया दिया।

मैंने जो दस-बारह प्रसिद्ध ग्रन्थ लिखे, उनके पीछे उस नौकर की कृपा मैं कभी नहीं भूलता। सवेरे उठने के कारण मुझे पर्याप्त समय मिलने लगा और उसका सदुपयोग करके मैंने न केवल पैसा कमाया, प्रसिद्धि भी पाई।"

*

मन माने की बात

यह घटना स्वतंत्रता से पहले की है। एक अंग्रेज़ अधिकारी भारत में नियुक्त था। जब भारत में पहली गर्मियाँ बिताने का अवसर आया तो उसकी तबीयत कुछ खराब रहने लगी। यहाँ की भीषण गर्मी उससे सहन नहीं हो रही थी।

वह एक बड़े सरकारी डाक्टर के पास गया और अपनी तबीयत खराब होने की बात बताई। डाक्टर ने बड़ी सावधानी से उसकी जाँच की। कुछ चीज़ों का, जैसे खून, पेशाब आदि का परीक्षण होना था। इसलिए डाक्टर ने कहा कि वह कल तक पूरी जाँच-रिपोर्ट तैयार करके उसके पास भेज देगा।

दूसरे दिन उस अधिकारी को डाक्टर की भेजी जाँच-रिपोर्ट मिल गई।

अधिकारी ने रिपोर्ट पढ़ी। उसमें लिखा था कि 'तुम्हारा बायाँ फेफड़ा बिल्कुल खराब हो गया है। जिगर भी ठीक से काम नहीं कर रहा है। इसलिए उचित यही होगा कि अपने महत्त्व के कामों को निपटा लो। वैसे अभी तुम्हारे जीवन को कुछ मास तक तो कोई खतरा नहीं है, किन्तु तुरन्त पूर्ण विश्राम ज़रूरी है।'

इस जाँच-रिपोर्ट को पढ़ते ही उस युवा अधिकारी की हालत एकदम खराब हो गई। उसे छाती में दर्द अनुभव होने लगा और साँस लेने में भी तकलीफ होने लगी।

रात को दर्द और भी बढ़ गया। उसे लगा कि उसकी मृत्यु का समय आ गया है। उसने नौकर को भेजकर अपनी गिरती हालत की सूचना डाक्टर को भिजवाई और तुरन्त आने को कहा।

डॉक्टर ने आते ही देखा कि रोगी की हालत खराब है। उसकी समझ में यह बात नहीं आई कि एक दिन में इसे क्या हो गया? उसने रोगी से पूछा कि "कल जब मैंने आपको देखा था तो आप ठीक थे। फिर एकाएक ऐसा क्या हो गया?"

युवक जो एकदम निढाल हो गया था, बोला, "मेरे बाएँ फेफड़े में बहुत दर्द हो रहा है। साँस लेने में कठिनाई हो रही है और मुझे लगता है कि मैं अब बचूँगा नहीं।"

डाक्टर ने कहा, "लेकिन कल तो तुम्हारे फेफड़े एकदम ठीक थे। आज एकाएक ऐसा क्या हो गया? तुमने कोई नशीली चीज़ तो नहीं खा ली? ज्यादा शराब तो नहीं पी गए?"

युवक ने मरी हुई आवाज़ में कहा, "किन्तु आपने

अपनी रिपोर्ट में तो लिखा है कि मेरा बायाँ फेफड़ा बिल्कुल खराब हो गया है और जिगर भी ठीक काम नहीं कर रहा है। आपने यह भी लिखा है कि मैं कुछ

ही दिनों का मेहमान हूँ।"

डाक्टर की समझ में कुछ नहीं आया। उसने आश्चर्य से पूछा, "यह तुम क्या कह रहे हो? मैंने तो तुम्हें कुछ दिनों के लिए पहाड़ पर जाने की सलाह दी थी, ताकि तुम यहाँ की गर्मी से बच जाओ।"

रोगी युवक ने सिरहाने के नीचे रखी रिपोर्ट डाक्टर के हाथ में थमाते हुए कहा, "आपने इसमें तो कुछ और ही लिखा है?"

डाक्टर ने रिपोर्ट को पढ़ा तो सारी बात समझ गया। डाक्टर के यहाँ से रिपोर्ट भेजते समय गड़बड़ हो गई थी। दो रोगियों की रिपोर्ट आपस में बदल गई थीं। यह रिपोर्ट दूसरे रोगी की थी, जो इसके लिफाफे में डाल दी गई थी।

डाक्टर ने उसे समझाया कि "यह तुम्हारी नहीं, दूसरे रोगी की रिपोर्ट है जो भूल से तुम्हारे वाले लिफाफे में डाल दी गई है।"

इतना सुनते ही रोगी बिस्तर पर उठा बैठा। डाक्टर ने कहा कि "तुम एकदम ठीक हो। इस ग़लत रिपोर्ट के कारण तुम्हारे मन पर जो प्रभाव पड़ा, उसी के कारण तुम्हारी हालत खराब हो गई। अब मैं चलता हूँ। हो सके तो छुट्टी लेकर पहाड़ पर हो आओ।"

कुछ ही घंटों में वह बिल्कुल ठीक हो गया। दूसरे दिन वह अपने काम पर गया और सबसे हँस-हँसकर अपनी बीमारी की बात बताता रहा।

*

ज्ञान की भूख

यह घटना इंगलैंड की है। वहाँ का एक बड़ा सरकारी अधिकारी अपने बगीचे में टहल रहा था। वहाँ एक जगह उसने न्यूटन की लिखी, लेटिन भाषा की एक पुस्तक पड़ी देखी। उन्होंने सोचा कि घर के किसी नौकर ने उनके पुस्तकालय से यह ली होगी और वह इसे यहाँ रखकर भूल गया है, क्योंकि यह किस्से-कहानियों की कोई साधारण पुस्तक नहीं थी। उन्होंने अपने नौकर को आज्ञा दी कि "इस पुस्तक को उठाओ और पुस्तकों की अलमारी में रख आओ!"

परन्तु बगीचे के माली का लड़का जो वहाँ पास ही काम कर रहा था, उसने कहा कि "यह पुस्तक मेरी है।"

उस बड़े अधिकारी को उसकी बात पर विश्वास नहीं हुआ। उसने आश्चर्य से पूछा, "क्या तुम न्यूटन,

लेटिन भाषा और रेखागणित को समझ सकते हो ?"

लड़के ने दृढ़ता से उत्तर दिया, "हाँ, कुछ-कुछ समझ लेता हूँ। जो बात समझ में नहीं आती, उसे समझने का प्रयत्न करता हूँ।"

अधिकारी ने पूछा, "तुमने ये सब बातें कहाँ से सीखीं ?"

लड़के ने उत्तर दिया, "दस वर्ष पहले मैंने वर्णमाला सीखी थी। और मैं समझता हूँ कि अपनी इच्छा के अनुसार स्वतंत्र रूप से पढ़ने के लिए वर्णमाला का ज्ञान काफी है।"

बगीचे का स्वामी उसकी बात सुनकर दंग रह गया। लड़के ने आगे कहा, "मैंने पहले पढ़ना सीखा। जब आपकी कोठी बन रही थी तो वहाँ राज-मिस्त्रियों को काम करते देखा। उनको नक्शे बनाते देखा। हिसाब लगाते देखा। मैंने उनसे पूछा तो उन्होंने अंकगणित के बारे में मुझे सरसरी तौर पर बताया। मैं बाज़ार से अंकगणित की एक पुस्तक खरीद लाया। उसे पढ़-पढ़कर अंकगणित की प्रारंभिक बातें सीख लीं। फिर मुझे पता चला कि रेखागणित एक और विद्या है। फिर मैं रेखागणित की पुस्तकें खरीद लाया और स्वयं अभ्यास करके उसे सीखने लगा।

"जब मैं इन पुस्तकों को पढ़ रहा था तो मुझे पता

चला कि लेटिन भाषा में इस विषय की अच्छी-अच्छी पुस्तकें हैं। तब मैंने लेटिन भाषा सीखनी प्रारंभ कर दी। मैं लेटिन भाषा का एक कोश खरीद लाया और उसकी सहायता से अपना शब्द-ज्ञान बढ़ाने लगा। फिर मेरी इच्छा फ्रेंच भाषा सीखने की हुई। उसका कारण भी यही था कि उस भाषा में भी अच्छी-अच्छी पुस्तकें थीं। उसे भी मैंने एक कोश की सहायता से सीख लिया।"

माली के लड़के की बातें सुनकर वह अधिकारी बहुत प्रभावित हुआ। उसने लड़के से कहा, "तुम्हें जब भी किसी पुस्तक के पढ़ने की आवश्यकता हो, मेरे निजी पुस्तकालय से लेकर पढ़ लिया करो।"

*

भय का भूत

यह घटना अमरीका के न्यू आर्लियन्स नगर की है। एक बार एक बहुत ही हट्टा-कट्टा हब्शी हस्पताल लाया गया। जो लोग उसे उठाकर लाए थे, उनका कहना था कि लड़ाई में उसे गोली लगी है।

आपको आश्चर्य होगा कि उसे यदि कोई घाव

होता, खून बहता और दर्द होता, तब तो गोली लगने की बात पर कोई विश्वास करता। इस सबके बिना उस हब्शी ने कैसे विश्वास कर लिया ?

बात यह थी कि उसके साथियों ने उसे इस तरह समझाया कि वह सच मान गया। उन्होंने उसे बताया कि तुम्हें जो गोली लगी है, वह अन्दर गहरी चली गई है। शरीर के अन्दर-ही-अन्दर कहीं बहुत तेज़ खून बह रहा है।

यह हब्शी यद्यपि गहरे काले रंग का था, तो भी मौत के भय के कारण उसका रंग सफेद पड़ गया था। उसके हाथ-पैर काँप रहे थे और कंठ सूख गया था। ऐसा लगता था कि वह थोड़ी ही देर में दम तोड़ देगा।

बात यह थी कि उसकी वर्दी के कोट में गोली लगने से गोल सुराख अवश्य हो गया था। यही कारण था कि उसे उनकी बातें सच जान पड़ती थीं।

हस्पताल पहुँचने पर डाक्टरों ने अच्छी जाँच-पड़ताल करके बताया कि उसे कहीं भी गोली नहीं लगी; गोली केवल कोट के कपड़े को छेदकर एक ओर चली गई थी।

फिर क्या था ! वह तुरन्त भला-चंगा हो गया। इसके साथ ही रोग के सारे लक्षण भी गायब हो गए।

उसके चेहरे का रंग स्वाभाविक हो गया। कँपकँपी बन्द हो गई और वह स्वस्थ हो गया।

*

तुम भी अपना जाल डाल दो

एक युवक नदी के किनारे यों ही टहल रहा था। देखने से ऐसा लगता था कि उसकी माली हालत अच्छी नहीं है। वहाँ पास ही मछुए मछलियाँ पकड़ रहे थे। वह अनमना-सा उन्हें मछलियाँ पकड़ते देखता रहा।

एक मछुए ने टोकरी-भर मछलियाँ पकड़ ली थीं और अब भी मछलियाँ पकड़ने में लगा हुआ था।

यह युवक मछलियों से भरी टोकरी को ललचाई दृष्टि से देख रहा था। वह अपने से ही बोला, "यदि यह मछलियों-भरी टोकरी मुझे मिल जाए तो मज़ा आ जाए! मैं इन्हें बेचकर अपने लिए भोजन का सामान खरीद लूँ और अपने रहने के लिए एक कमरा भी किराये पर ले लूँ।"

मछुए ने उसकी बात सुन ली। वह उस युवक से बोला, "मैं तुम्हें ये सारी मछलियाँ दे सकता हूँ, पर तुम्हें मेरा कुछ काम करना होगा।"

युवक ने पूछा, "कौन-सा काम ?"

मछुआ बोला, "मैं थोड़ी देर के लिए कहीं जाऊँगा। तुम मेरे आने तक मछली पकड़ने की इस डोरी को पकड़े रहो। जब कोई मछली फँस जाए तो उसे निकाल लेना और चारा लगाकर काँटा डाल देना।"

युवक ने स्वीकार कर लिया। जब थोड़ी देर हुई तो डोरी पकड़े-पकड़े वह ऊबने लगा। फिर एक मछली फँसी तो युवक की उदासी चली गई। वह इस काम में रुचि लेने लगा। फिर तो एक के बाद एक कितनी ही मछलियाँ उसने पकड़ीं।

जब तक मछुआ लौटा, तब तक यह युवक एक टोकरी मछलियाँ पकड़ चुका था।

मछुए ने वायदे के अनुसार उस युवक को मछलियाँ दे दीं और कहा, "मैंने तुम्हें तुम्हारी ही मेहनत से पकड़ी मछलियाँ देकर अपना वायदा पूरा किया है। मेरी इस सीख को याद रखना कि जब तुम देखो कि दूसरे अपनी मनचाही चीज़ प्राप्त कर रहे हैं, तो मूर्खों की तरह खड़े मत रहो। तुम भी अपनी मनचाही वस्तु प्राप्त करने के लिए अपना प्रयत्न शुरू करो, अपना जाल डालो !"

*